JOURNAL OF THE ROYAL LAUREATES ACADEMY

www.rlaindia.org

# ऋग्वेद के आरण्यक साहित्य में महिलाओं के प्रतिनिधित्व का अध्ययन

**Dr. Suryanarayan Gautam**

Supervisor, Eklavya University, Damoh

**Sonamoni Das**

Research Scholar, Sanskrit, Eklavya University, Damoh

**सारांश**

ऋग्वेद से संबद्ध आरण्यक साहित्य वैदिक चिंतन की वह महत्वपूर्ण कड़ी है, जिसमें यज्ञप्रधान परंपरा से आगे बढ़कर आध्यात्मिक एवं दार्शनिक तत्वों का विकास दिखाई देता है। आरण्यक ग्रंथों में मानव जीवन, आत्मा, ब्रह्म तथा साधना संबंधी विचारों के साथ-साथ सामाजिक व्यवस्था और महिलाओं की स्थिति का भी उल्लेख प्राप्त होता है। इस शोध का उद्देश्य ऋग्वेद के आरण्यक साहित्य में महिलाओं के प्रतिनिधित्व का विश्लेषण करना है। अध्ययन से ज्ञात होता है कि वैदिक समाज में महिलाओं को केवल गृहस्थ जीवन तक सीमित नहीं माना गया, बल्कि उन्हें ज्ञान, धर्म तथा आध्यात्मिक साधना में भी सहभागिता का अधिकार प्राप्त था। आरण्यक साहित्य में स्त्री को धार्मिक अनुष्ठानों की सह-अधिकारिणी, परिवार की आधारशिला तथा नैतिक मूल्यों की संरक्षिका के रूप में चित्रित किया गया है। कुछ स्थलों पर महिलाओं की विद्वत्ता एवं आध्यात्मिक चेतना का भी उल्लेख मिलता है, जो यह दर्शाता है कि वैदिक युग में स्त्रियाँ बौद्धिक रूप से सक्रिय थीं। यद्यपि उत्तरवैदिक समाज में स्त्री की स्वतंत्रता में कुछ सीमाएँ दिखाई देती हैं, फिर भी आरण्यक साहित्य महिलाओं की गरिमामयी स्थिति को रेखांकित करता है। यह अध्ययन वैदिक संस्कृति में महिलाओं की भूमिका को समझने का एक महत्वपूर्ण प्रयास है।

**मुख्यशब्द-** ऋग्वेद, आरण्यक साहित्य, वैदिक नारी, महिला प्रतिनिधित्व, वैदिक संस्कृति, स्त्री शिक्षा, आध्यात्मिक चेतना, वैदिक समाज, धार्मिक अधिकार, भारतीय परंपरा।

## प्रस्तावना

आरण्यक वैदिक साहित्य में एक संक्रमणकालीन चरण का प्रतिनिधित्व करते हैं, जो अत्यधिक कर्मकांडीय ब्राह्मणों और दार्शनिक उपनिषदों के बीच एक सेतु का काम करते हैं। ये "वन ग्रंथ" तपस्वियों और उन्नत चिकित्सकों के लिए हैं, जो औपचारिक कर्मकांड से परे आध्यात्मिक ज्ञान प्राप्त करने के लिए समाज से अलग हो गए हैं। चिंतनशील आध्यात्मिकता की ओर यह आंतरिक मोड़ वैदिक विचार की संरचना में एक महत्वपूर्ण परिवर्तन को दर्शाता है - बाहरी यज्ञों (बलिदान) से लेकर आंतरिक ध्यानात्मक अंतर्दृष्टि और आध्यात्मिक चिंतन तक। हालाँकि, इस दार्शनिक विकास के असमान लिंग परिणाम थे। जबकि बदलाव स्पष्ट रूप से अधिक समावेशी, चिंतनशील आध्यात्मिकता की ओर बढ़ गया, आरण्यकों में महिलाओं के वास्तविक संदर्भ और भी दुर्लभ हो गए। ब्राह्मणों के अनुष्ठान ग्रंथ, हालांकि पितृसत्तात्मक थे, कम से कम कुछ बलिदान कार्यों में पत्नी की उपस्थिति को स्वीकार करते थे। इसके विपरीत, आरण्यक कहीं अधिक अमूर्त हैं, जो सृष्टि, श्वास, ब्रह्मांड और स्वयं के बारे में दार्शनिकता करते हैं, जिसमें आध्यात्मिक खोज में सक्रिय प्रतिभागियों के रूप में वास्तविक महिलाओं का बहुत कम या कोई उल्लेख नहीं है। इन ग्रंथों में वर्णित चिंतनशील जीवन पुरुष तपस्वियों के लेंस के माध्यम से तैयार किया गया था, जो अक्सर एकांत, परिवार से अलगाव और कामुक संबंधों को अस्वीकार करते थे - एक ऐसा मॉडल जो पारंपरिक रूप से महिलाओं को सौंपी गई भूमिकाओं के साथ असंगत था। इस प्रकार, आरण्यकों में मनाया जाने वाला समाज से अलगाव न केवल भौतिक था, बल्कि पाठ्य भी था: महिलाओं को सामग्री और दार्शनिक कल्पना दोनों में प्रतीकात्मक रूप से हाशिए पर रखा गया था। इसके अलावा, जब स्त्रैण तत्वों का संदर्भ दिया जाता है, तो वे आमतौर पर रूपक होते हैं - प्रजनन क्षमता, प्रकृति या ब्रह्मांडीय गर्भ के प्रतीक के रूप में - बजाय ज्ञान के स्वतंत्र एजेंट या मुक्ति के साधक के रूप में। यह आध्यात्मिक पहुंच में लिंग आधारित पूर्वाग्रह का संकेत देता है, जहां नारीत्व को प्रतीकात्मक रूप में पूजनीय माना जाता है लेकिन जीवंत प्रतिनिधित्व में चुप करा दिया जाता है।

## स्त्री सिद्धांत (शक्ति और प्रकृति) का प्रतीकात्मक उपयोग

आरण्यक साहित्य में, हालांकि ऐतिहासिक या सामाजिक रूप से अंतर्निहित महिलाओं के प्रत्यक्ष संदर्भ कम हैं, स्त्री सिद्धांत प्रतीकात्मक और आध्यात्मिक रूपों में प्रकट होता रहता है, विशेष रूप से शक्ति (शक्ति), प्रकृति, प्रजनन क्षमता और सहज ज्ञान के प्रतिनिधित्व के रूप में। यह प्रतीकात्मक उपयोग ठोस अनुष्ठान भागीदारी से बदलाव को दर्शाता है - जहाँ महिलाएँ, अधीनस्थ होते हुए भी, दृश्यमान भूमिकाएँ रखती थीं - स्त्रीत्व की अधिक अमूर्त अवधारणाओं की ओर, जो वास्तविक महिला अनुभव से अलग है।

आरण्यक, अपने चिंतनशील लहजे में, ब्रह्मांड के कामकाज का वर्णन करने के लिए अक्सर प्राकृतिक

रूपकों का उपयोग करते हैं, और ऐसा करने में, ब्रह्मांडीय कार्य के ढांचे के भीतर स्त्री को समाहित करते हैं। उदाहरण के लिए, पृथ्वी को अक्सर एक माँ के रूप में चित्रित किया जाता है - पोषण करने वाली, सहारा देने वाली और उपजाऊ - जबकि चंद्रमा, जल और वाणी (वाक) भी स्त्री ऊर्जा से ओतप्रोत हैं। ये तत्व आकस्मिक नहीं हैं, बल्कि आरण्यक ब्रह्माण्ड विज्ञान के लिए केंद्रीय हैं, जहाँ सृजन, परिवर्तन और विघटन सभी पुरुष और स्त्री के द्विआधारी अंतर्क्रिया के भीतर समाहित हैं - यज्ञकर्ता और गर्भ, बीज और मिट्टी, श्वास और शरीर।

विशेष रूप से उल्लेखनीय है प्रकृति (प्रकृति) पर बार-बार जोर दिया जाना, जिसे सक्रिय, गतिशील स्त्री शक्ति के रूप में समझा जाता है जो पुरुष (निष्क्रिय, साक्षी पुरुष आत्मा) का पूरक है। यह द्वंद्व बाद के सांख्य दर्शन का पूर्वाभास देता है, लेकिन आरण्यकों के भीतर भ्रूण रूप में मौजूद है। यहाँ स्त्री को ब्रह्मांडीय संतुलन के लिए आवश्यक माना जाता है, फिर भी विडंबना यह है कि प्रतीकात्मक स्त्रीत्व का यह उत्थान वास्तविक महिलाओं को सीखने या मुक्ति के विषयों के रूप में शामिल करने में अनुवाद नहीं करता है।

इसके अलावा, शक्ति, हालांकि आरण्यकों में औपचारिक रूप से इस तरह से नामित नहीं है (एक अवधारणा जो बाद के तांत्रिक ग्रंथों में पूरी तरह से विकसित हुई है), यज्ञ के अंतर्निहित ऊर्जावान सिद्धांत में महसूस की जा सकती है, जिसके लिए न केवल क्रिया (कर्म) की आवश्यकता होती है, बल्कि सहज, ग्रहणशील शक्ति की आवश्यकता होती है जो अक्सर स्त्री के साथ जुड़ी होती है। बलिदान के कार्य को सक्रिय और ग्रहणशील के बीच एक मिलन के रूप में तैयार किया गया है, एक प्रतीकात्मक अंतर्क्रिया जो वास्तविक महिलाओं को आवाज़ दिए बिना चुपचाप स्त्री की शक्ति को स्वीकार करती है। निष्कर्ष में, जबकि आरण्यक साहित्य में स्त्री सिद्धांत पौराणिक रूप से समृद्ध और प्रतीकात्मक रूप से शक्तिशाली है, यह वास्तविक महिलाओं की जीवित जटिलता से रहित, आदर्श और अवैयक्तिक बना हुआ है। स्त्री शक्तियों का रूपक उत्सव वन ग्रंथों की दार्शनिक पितृसत्ता को नष्ट नहीं करता है, जो आध्यात्मिक जांच और अधिकार में महिलाओं की प्रत्यक्ष भूमिकाओं को हाशिए पर रखना जारी रखता है।

## वन दर्शन में रूपक महिलाएँ और पौराणिक कल्पनाएँ

आरण्यक, अनुष्ठानिक रूढ़िवादिता और आध्यात्मिक अटकलों के बीच एक संक्रमणकालीन अवधि में रचित, रूपक कथाओं और पौराणिक प्रतीकात्मकता से समृद्ध हैं। इन ग्रंथों में, महिलाएँ और स्त्रैण आकृतियाँ ऐतिहासिक एजेंटों के रूप में नहीं, बल्कि रूपक रचनाओं के रूप में दिखाई देती हैं - दैवीय शक्तियों, ब्रह्मांडीय सिद्धांतों या अमूर्त आध्यात्मिक विचारों का व्यक्तित्व। यह रूपक अनुष्ठानिक शाब्दिकता से दूर एक दार्शनिक कदम को दर्शाता है, लेकिन यह महिलाओं की जीवंत उपस्थिति को

मिटाने में भी योगदान देता है, इसे आदर्श, प्रतीकात्मक स्त्रीत्व के साथ बदल देता है।

आरण्यक साहित्य की प्रमुख विशेषताओं में से एक पौराणिक कथा पद्धति है - गहरे दार्शनिक सत्य को व्यक्त करने के लिए प्रतीकात्मक मिथकों का उपयोग। इस ढांचे के भीतर, रचनात्मक ऊर्जा, उत्पादक शक्ति, पोषण, अंतर्ज्ञान और रहस्य का प्रतिनिधित्व करने के लिए स्त्री संस्थाओं का आह्वान किया जाता है। उदाहरण के लिए, स्त्री सिद्धांत को सृष्टि के आदिम गर्भ (योनि) के रूप में चित्रित किया जा सकता है, जो ब्रह्मांडीय उत्पत्ति और बोध के आंतरिक स्थान दोनों के लिए एक रूपक है। ऐसी कल्पना में, नारीत्व स्वयं ब्रह्मांड का प्रतीक बन जाता है - पवित्र अज्ञात का अवतार। ये ग्रंथ अक्सर सृष्टि मिथकों का पता लगाते हैं जिसमें पृथ्वी या रात को नारीकृत किया जाता है और आकाश या दिन जैसे मर्दाना समकक्ष के साथ जोड़ा जाता है, जो एक ब्रह्मांडीय द्वैतवाद का सुझाव देता है जहां संतुलन लिंग आधारित ध्रुवों पर निर्भर करता है। वाणी (वाक), रात्रि (रात्रि) और भोर (उषा) के देवी-जैसे मानवीकरण केवल काव्यात्मक रूपक नहीं हैं, बल्कि दार्शनिक अंतर्दृष्टि के लिए वाहन के रूप में काम करते हैं। वाक, विशेष रूप से, पवित्र ज्ञान की आवाज़ के रूप में पूजनीय है, और उसका मानवीकरण भाषा की शक्ति को स्त्री के साथ जोड़ता है, भले ही वास्तविक महिलाओं को दार्शनिक प्रवचन में आवाज़ से वंचित किया जाता है। हालांकि, जहां ये रूपक संदर्भ स्त्री की प्रतीकात्मक स्थिति को बढ़ाते हैं, वहीं वे वास्तविकता को विस्थापित भी करते हैं, प्रतिनिधित्व के एक ऐसे तरीके को मजबूत करते हैं जहां महिलाएं मूर्त विचारक या व्यवसायी होने के बजाय अमूर्त आदर्श हैं। यह रूपक रणनीति ग्रंथों को महिला व्यक्तिपरकता को बाहर करते हुए स्त्री देवत्व की प्रशंसा करने की अनुमति देती है। इस प्रकार, महिला पवित्र शक्ति का एक कंटेनर बन जाती है लेकिन इसकी अभिव्यक्ति में भागीदार नहीं होती है। संक्षेप में, आरण्यकों में महिलाओं की पौराणिक कल्पना श्रद्धा और प्रतिरोध दोनों को दर्शाती है: पवित्र के रूप में स्त्री के विचार के प्रति श्रद्धा, और आध्यात्मिक या दार्शनिक क्षेत्रों में वास्तविक महिलाओं की एजेंसी की धारणा के प्रति प्रतिरोध। यह द्वंद्व आरण्यक विचार का एक विरोधाभासी मूल बनाता है-जहां महिलाएं प्रतीक में हर जगह हैं लेकिन व्यक्तिगत रूप से कहीं नहीं हैं।

### 1 प्राकृतिक शक्तियों के व्यक्तित्व के रूप में महिलाएँ

आरण्यकों और प्रारंभिक उपनिषदिक ग्रंथों में, प्राकृतिक तत्वों के शक्तिशाली व्यक्तित्वों के माध्यम से स्त्रीत्व को बार-बार उभारा गया है। पृथ्वी (पृथ्वी), उषा (भोर), और रात्रि (रात) जैसी आकृतियाँ केवल पर्यावरण के वर्णनात्मक तत्व नहीं हैं - उन्हें प्राकृतिक और आध्यात्मिक दुनिया के मूल पहलुओं को मूर्त रूप देते हुए दिव्य स्त्री उपस्थिति का दर्जा दिया गया है। ये आकृतियाँ प्राचीन भारतीय विश्वदृष्टि को दर्शाती हैं जिसमें प्रकृति जीवंत, चक्रीय और मूल रूप से स्त्रैण है, और जिसमें सृजन, पोषण, परिवर्तन और विघटन की प्रक्रियाएँ सभी महिला आदर्शों के साथ घनिष्ठ रूप से जुड़ी हुई हैं।

पृथ्वी, पृथ्वी देवी, शायद इन व्यक्तित्वों में सबसे आधारभूत है। वह पालनकर्ता, आधार, बलिदान प्राप्त करने वाली और हमेशा देने वाली माँ है जो अपने विशाल शरीर में सभी प्राणियों को धारण करती है। वह स्थिरता, प्रचुरता और ग्रहणशीलता से जुड़ी हुई है, जो वैदिक ब्रह्माण्ड विज्ञान की संरचना करने वाले मातृ आदर्शों को दर्शाती है। अनुष्ठान और प्रतीकात्मक शब्दों में, उसे उर्वरता, सहनशीलता और पोषण के लिए बुलाया जाता है, जो पुरुष आकाश देवता, द्यौस का एक ब्रह्मांडीय समकक्ष बन जाता है। फिर भी, जबकि पृथ्वी आवश्यक और दिव्य है, वह इन ग्रंथों में कार्य नहीं करती या बोलती नहीं है; उस पर कार्य किया जाता है, कार्य नहीं किया जाता है - एक पवित्र उपस्थिति, लेकिन कथा या धार्मिक एजेंसी के बिना। इसी तरह, उषा, मानवीकृत भोर, एक उज्ज्वल युवा देवी के रूप में प्रकट होती है जो प्रकाश लाती है, प्राणियों को जगाती है, और समय के नवीनीकरण का संकेत देती है। उनकी सुंदरता और अनुग्रह की प्रशंसा पहले के वैदिक भजनों में की गई है, और भोर का फिर भी, पृथ्वी की तरह, उषा एक प्रतीक है, विषय नहीं - पुरुष ऋषियों द्वारा स्वयं और ब्रह्मांड के भीतर संक्रमण को व्यक्त करने के लिए इस्तेमाल किया जाने वाला एक रूपक उपकरण।

रात्रि, या रात, एक अधिक गहरा, अधिक रहस्यमय व्यक्तित्व है। वह रहस्य, छिपाव और उपजाऊ अज्ञात का प्रतिनिधित्व करती है। उसकी उपस्थिति अक्सर आंतरिक प्रतिबिंब, गर्भधारण और आध्यात्मिक ऊष्मायन से जुड़ी होती है - एक ऐसा समय जब मन भीतर की ओर मुड़ता है और साधक अंतर्दृष्टि के लिए तैयार होता है। रात एक पवित्र विराम बन जाती है, गर्भ की तरह, जहाँ परिवर्तन संभव है। लेकिन फिर से, रात्रि का आह्वान उसके द्वारा प्रतिनिधित्व किए जाने के लिए किया जाता है, न कि उसके द्वारा कहे या किए जाने के लिए। वह अचेतन का प्रतीक है, कथा के भीतर एक आवाज़ नहीं।

इन उदाहरणों में, पैटर्न स्पष्ट है: आरण्यकों में महिला व्यक्तित्व ब्रह्मांडीय सिद्धांतों के रूप में कार्य करते हैं, जो आध्यात्मिक प्रणाली के लिए आवश्यक हैं लेकिन कथा एजेंसी से रहित हैं। वे अनुभव, इरादे या धार्मिक तर्क वाले पात्र नहीं हैं। इसके बजाय, वे पुरुष-केंद्रित ब्रह्मांड विज्ञान के भीतर काव्यात्मक प्रतीक हैं, जहां उनका प्राथमिक कार्य पुरुष आध्यात्मिक साधक के लाभ के लिए विचारों को मूर्त रूप देना है। स्त्रीत्व दृश्यमान, प्रतिष्ठित और रूपक में समृद्ध रूप से बना हुआ है, लेकिन यह निष्क्रिय, स्थिर और ध्वनिहीन रहता है।

## 2 परिवर्तन के गर्भ के रूप में स्त्री

आरण्यक दर्शन में, स्त्री से जुड़े सबसे स्थायी और गहन रूपकों में से एक गर्भ (योनि) का है - एक पवित्र, सीमांत स्थान जहाँ जीवन न केवल गर्भाधान होता है बल्कि गर्भधारण, परिवर्तन और अंततः उद्भव की एक अदृश्य प्रक्रिया से गुजरता है। गर्भ की यह कल्पना अपने जैविक अर्थ से परे एक शक्तिशाली ब्रह्मांडीय और आध्यात्मिक रूपक बन जाती है, जिसका उपयोग स्वयं की छिपी हुई

आंतरिकता, ब्रह्मांड की उत्पत्ति और ध्यानपूर्ण बोध की प्रक्रिया का प्रतिनिधित्व करने के लिए किया जाता है। इस अर्थ में, गर्भ केवल जन्म का प्रतीक नहीं है, बल्कि आंतरिकता के माध्यम से उत्थान का प्रतीक है।

आरण्यक, बाहरी कर्मकांड से आंतरिक प्रतीकवाद की ओर अपने बदलाव में, गर्भ की कल्पना से जुड़े गुणों - संयम, अंधकार और उद्भव की भाषा का उपयोग करते हैं। सांस पर नियंत्रण (प्राणायाम), इंद्रियों को वापस लेने (प्रत्याहार), और आंतरिक प्रतिबिंब (ध्यान) के माध्यम से साधक को स्वयं के गर्भ जैसे स्थान में फिर से प्रवेश करने, आध्यात्मिक रूप से पुनर्जन्म लेने के लिए दुनिया से वापस जाने के रूप में वर्णित किया गया है। आंतरिक ऊष्मायन की इस स्थिति में, ज्ञान अर्जित नहीं किया जाता है बल्कि गर्भाधान होता है - चेतना की अदृश्य गहराई में धीरे-धीरे, चुपचाप बढ़ता है। इस रूपक को ब्रह्मांडीय पैमाने पर आगे बढ़ाया जाता है, जहां पूरे ब्रह्मांड को एक आदिम गर्भ से उत्पन्न होने के लिए कहा जाता है - सृष्टि की योनि। बाद के तांत्रिक और सांख्य दर्शन की तरह, प्रकृति का विचार स्त्रैण आधार के रूप में जिससे सभी भौतिक घटनाएं उत्पन्न होती हैं, यहां जड़ जमाना शुरू होती हैं। गर्भ रहस्यमय उत्पत्ति का प्रतीक बन जाता है, स्रोत-स्थान जहां रूप निराकार से उत्पन्न होता है, जहां मौन ध्वनि को जन्म देता है, और जहां एकता सृष्टि की विविधता में विभाजित हो जाती है। इस अर्थ में, स्त्रीत्व परिधीय नहीं है, बल्कि वन ग्रंथों की आध्यात्मिक कल्पना के लिए केंद्रीय है।

इसके अलावा, आरण्यकों में वर्णित कई ध्यानात्मक अवस्थाएँ गर्भ के गुणों की नकल करती हैं - स्थिरता, गर्मी, घेरा, लयबद्ध स्पंदन (जैसे कि साँस में), और रैखिक समय से वियोग। आकांक्षी को, भ्रूण की तरह, बाहरी विकर्षणों को त्यागना चाहिए, अंधकार और मौन को स्वीकार करना चाहिए, और नियंत्रण को आत्मसमर्पण करना चाहिए, एक ऐसी प्रक्रिया पर भरोसा करना चाहिए जिसे जल्दबाजी या मजबूर नहीं किया जा सकता है। यह ज्ञान के मार्ग (ज्ञान-मार्ग) को स्त्री-कोडित प्रक्रियाओं, जैसे कि प्रतीक्षा करना, प्राप्त करना, पोषण करना और जन्म देना - स्त्री अनुभव में निहित ज्ञान की एक अंतर्निहित स्वीकृति के साथ संरेखित करता है।

## 3 सूक्ष्म रूप में पौराणिक देवियाँ

आरण्यकों में, दिव्य स्त्रीत्व स्पष्ट रूप से व्यक्त, क्रिया-उन्मुख देवियों के माध्यम से प्रकट नहीं होता है जिन्हें बाद में पुराणों में देखा गया - जैसे दुर्गा, लक्ष्मी, या सरस्वती - बल्कि सूक्ष्म, अमूर्त और प्रतीकात्मक रूपों में प्रकट होता है। देवीत्व की यह प्रारंभिक अवधारणा एक आध्यात्मिक अभिविन्यास को प्रकट करती है जिसमें स्त्री देवत्व को पौराणिक कथाओं के माध्यम से नाटकीय रूप देने के बजाय ब्रह्मांडीय कार्यों में विलीन कर दिया जाता है। ये दिव्य स्त्री उपस्थिति अनुष्ठान संरचना, आध्यात्मिक विचार और भाषाई दर्शन के लिए आवश्यक हैं, फिर भी उन्हें शायद ही कभी इच्छा या कथात्मक आवाज़ के साथ

स्वायत्त एजेंटों के रूप में चित्रित किया जाता है। इन ग्रंथों में नामित कुछ देवियों में से, वाक् - वाणी की देवी - एक अत्यंत महत्वपूर्ण लेकिन विरोधाभासी आकृति के रूप में सामने आती है। वाक् केवल बोली जाने वाली भाषा से जुड़ी नहीं है; उसे पवित्र ध्वनि के अवतार, मंत्र के पीछे की शक्ति और दिव्य और मानव के बीच सेतु के रूप में देखा जाता है। इस अर्थ में, वह वैदिक अनुष्ठान और दार्शनिक प्रवचन के कामकाज के लिए अपरिहार्य है। वाक् के बिना, मंत्रों का उच्चारण नहीं किया जा सकता, यज्ञ आगे नहीं बढ़ सकता, और ब्रह्मांड को व्यक्त या समझा नहीं जा सकता। वह रहस्योद्घाटन की बहुत ही सांस है, वह माध्यम जिसके माध्यम से वेद प्रकट होते हैं। हालाँकि, वाक् की यह केंद्रीयता महत्वपूर्ण सीमाओं के साथ आती है। वह अपनी शर्तों पर नहीं बोलती; बल्कि, उसकी उपस्थिति का उपयोग पुरुष ऋषि (द्रष्टा) के भाषण को बढ़ाने और मान्य करने के लिए किया जाता है। उसे बुलाया जाता है, बुलाया जाता है, और वर्णित किया जाता है, लेकिन वह शायद ही कभी कार्य करती है या पहल करती है। ऋग्वेद के प्रसिद्ध देवी सूक्त में (जो आरण्यकों से पहले का है लेकिन उनके धर्मशास्त्र को सूचित करता है), वाक् अपनी शक्ति और ब्रह्मांडीय भूमिका की घोषणा करता है - लेकिन यह भजन अभी भी एक पुरुष ऋषि की आवाज़ के माध्यम से सुनाया जाता है, और आरण्यकों ने मुख्य रूप से उसे एक कथा नायक के बजाय एक वैचारिक शक्ति के रूप में अवशोषित किया है। यह प्रतीकात्मक निर्भरता और कार्यात्मक अधीनता के एक बड़े पैटर्न को दर्शाता है। स्त्री दिव्य, यहां तक कि जब आवश्यक हो - जैसे कि पवित्र ज्ञान की आवाज़ के रूप में वाक् - स्वतंत्र या आत्म-निर्धारण नहीं है। वह अनुष्ठान प्रक्रिया की सेवा करने और पुरुष चिकित्सकों को उच्च सत्य तक पहुँचने में सक्षम बनाने के लिए मौजूद है, न कि उन सत्यों को स्वयं परिभाषित करने या उन पर सवाल उठाने के लिए। उसकी वाणी साधनात्मक है, आलोचनात्मक नहीं। उसकी उपस्थिति ब्रह्मांडीय है, फिर भी संदर्भगत रूप से मौन है।

## 4 रूपक और वास्तविक महिलाओं का विलोपन

आरण्यकों और संबंधित आरंभिक ग्रंथों में रूपक के रूप में स्त्री का उपयोग उल्लेखनीय सूक्ष्मता और द्वंद्व के साथ संचालित होता है। सतह पर, ये लेखन स्त्री का उत्सव मनाते प्रतीत होते हैं - उसे प्रकृति, परिवर्तन, ब्रह्मांडीय शक्ति और आध्यात्मिक अंतर्दृष्टि से जोड़ते हैं। गर्भ (योनि), पृथ्वी (पृथ्वी), रात्रि (रात्रि) और वाणी (वाक्) जैसे महिला-कोडित प्रतीक सभी पवित्र प्रवचन के बहुत ही ताने-बाने में बुने हुए हैं। फिर भी इस प्रतीकात्मक उत्थान के नीचे विलोपन की एक अधिक कपटी प्रक्रिया निहित है, जिसमें वास्तविक महिलाओं - मूर्त, सोच, अभ्यास करने वाले एजेंटों के रूप में - को चुप करा दिया जाता है और विस्थापित कर दिया जाता है।

यह प्रक्रिया स्त्री के मिथक और रूपक में परिवर्तन के साथ शुरू होती है। महिला अब अनुष्ठान या दार्शनिक दुनिया में भागीदार नहीं है; इसके बजाय, वह एक प्रतीकात्मक संसाधन बन जाती है, जिसका

उपयोग पुरुष साधक के आध्यात्मिक मार्ग को चित्रित करने के लिए किया जाता है। उसके शारीरिक कार्य, भावनात्मक गहराई और उत्पादक क्षमताएँ अमूर्त हो जाती हैं, दार्शनिक रूपकों और आध्यात्मिक अवधारणाओं में परिवर्तित हो जाती हैं। गर्भ पुनर्जन्म का प्रतीक बन जाता है, सृजन में महिलाओं की भूमिका की पुष्टि नहीं। वाक् मंत्रों की आवाज़ बन जाता है, वास्तविक महिलाओं की बोलने वाली आवाज़ नहीं। प्रकृति मातृ है, लेकिन धार्मिक संरचना के भीतर महिलाओं को मातृ अधिकार नहीं दिया जाता है। स्त्रीत्व का यह सौंदर्यीकरण उसे जीवित अनुभव और सामाजिक-धार्मिक उपस्थिति से वंचित करता है। ग्रंथ इस बात से चिंतित नहीं हैं कि महिलाएं वास्तविक दुनिया में क्या सोचती हैं, महसूस करती हैं या करती हैं। इसके बजाय वे उसे आदर्शों, शक्तियों और छवियों के एक समूह तक सीमित कर देते हैं, जो पुरुष-उन्मुख आध्यात्मिक अभ्यास के धार्मिक ढांचे का समर्थन करने के लिए ढाले गए हैं। प्रतीकात्मक श्रद्धा और व्यावहारिक बहिष्कार के बीच यह वियोग एक बड़े वैचारिक पैंतरे को प्रकट करता है: स्त्री को आदर्श बनाकर, ग्रंथ इसे बेअसर कर देते हैं - यह सुनिश्चित करते हुए कि इसकी शक्ति वैचारिक बनी रहे, विघटनकारी नहीं।

इसके अलावा, ये रूपक पितृसत्तात्मक अधिकार को वैध बनाने में योगदान करते हैं। चूँकि स्त्री पहले से ही पवित्र रूपों में मौजूद है - पृथ्वी, रात, भोर, वाणी - इसलिए आध्यात्मिक क्षेत्र में वास्तविक महिलाओं को शामिल करने की कोई आवश्यकता नहीं है। उनकी अनुपस्थिति को प्रतीकात्मक उपस्थिति के रूप में उचित ठहराया जा सकता है। महिलाओं को पौराणिक आदर्शों में बदलकर, ग्रंथ वैदिक शिक्षा, पुरोहिती, लेखकत्व या संवाद में वास्तविक भागीदारी से उनके संरचनात्मक बहिष्कार को छिपाते हैं। यह पुरुष आध्यात्मिक आकृतियों को वास्तविक महिलाओं के साथ अधिकार साझा किए बिना स्त्रीत्व का आह्वान करने की अनुमति देता है।

### 5 प्रतीकात्मक शक्ति बनाम संस्थागत बहिष्कार

आरण्यक - ब्राह्मणों के बाह्य कर्मकांड और उपनिषदों के आंतरिक तत्वमीमांसा के बीच स्थित वे ध्यानपूर्ण, संक्रमणकालीन ग्रंथ - वैदिक विचार के केंद्र में एक मौलिक तनाव को प्रकट करते हैं: स्त्री का एक अद्भुत प्रतीकात्मक महिमामंडन, जो वास्तविक महिलाओं के संस्थागत बहिष्कार के विपरीत है। इन वन ग्रंथों की दार्शनिक भाषा के भीतर, स्त्री को श्रद्धा और रहस्य के साथ उभारा गया है, जो ब्रह्मांडीय प्रक्रियाओं, आध्यात्मिक परिवर्तन और आंतरिक जागृति से जुड़ा है। हालाँकि, यह प्रतीकात्मक शक्ति गहराई से सीमित है, क्योंकि यह पुरुष लेखकों और विचारकों द्वारा नियंत्रित रूपक स्थानों तक ही सीमित है, जिसमें महिलाओं की भूमिकाओं, अधिकारों या एजेंसी में वास्तविक दुनिया का बहुत कम या कोई विस्तार नहीं है। यह विरोधाभास सबसे अधिक इस बात में दिखाई देता है कि कैसे ग्रंथों में रूपक या दिव्य स्त्री आकृतियों को दर्शाया गया है - जैसे कि वाक् (वाणी), पृथ्वी (पृथ्वी), या योनि (गर्भ)

- ब्रह्मांडीय निरंतरता और आध्यात्मिक अभ्यास के लिए आवश्यक, जबकि वास्तविक महिलाओं को इन विचारों को उत्पन्न करने वाली परंपराओं में भाग लेने या उन्हें आकार देने से बाहर रखा गया है। ये स्त्री प्रतीक सीमांत नहीं हैं; उन्हें अक्सर ब्रह्मांडीय और दार्शनिक प्रणालियों के केंद्र में रखा जाता है। फिर भी, वे लगभग विशेष रूप से एक साहित्यिक ब्रह्मांड के भीतर कार्य करते हैं जो महिलाओं को सशक्त किए बिना स्त्रीत्व को सौंदर्य प्रदान करता है।

इस तरह, प्रतीकात्मक उत्थान वैचारिक नियंत्रण का एक रूप बन जाता है। पौराणिक और आध्यात्मिक शब्दों में स्त्री की प्रशंसा करके, आरण्यक समावेशी या प्रगतिशील भी दिखाई दे सकते हैं। लेकिन यह उत्थान वास्तव में वही है जो व्यावहारिक समावेशन को स्थगित या अस्वीकार करने की अनुमति देता है। चूँकि स्त्री को पहले से ही प्रतीकात्मक रूप से "प्रतिनिधित्व" किया गया है, इसलिए पुरोहिती, शास्त्रों की व्याख्या या शैक्षणिक संस्थानों से वास्तविक महिलाओं की अनुपस्थिति पर सवाल नहीं उठाया जाता है - इसे स्वाभाविक बना दिया जाता है। यह प्रतीकात्मक प्रॉक्सी सुनिश्चित करता है कि धार्मिक संरचनाओं के भीतर पुरुष वर्चस्व को चुनौती नहीं दी जा सकती, भले ही उच्चतम आध्यात्मिक सत्यों में से कुछ को व्यक्त करने के लिए स्त्री की कल्पना का उपयोग किया जाता है। प्रतीकात्मक शक्ति और संस्थागत बहिष्कार के बीच यह विसंगति इस प्रकार दोहरा कार्य करती है: यह अमूर्त में स्त्री के महत्व की पुष्टि करती है, जबकि यह वास्तविक महिलाओं को अमूर्त ज्ञान के उसी क्षेत्र तक पहुँच से वंचित करती है। पवित्रता की भाषा, जिसे उदारतापूर्वक स्त्री प्रतीकों पर लागू किया जाता है, एक गहरी संरचनात्मक विषमता को छुपाती है - जहाँ पुरुष व्याख्याकार, वक्ता और दार्शनिक होते हैं, और महिलाएँ रूपक होती हैं जिनके माध्यम से पुरुष अनुभव व्यक्त किया जाता है। इसके अलावा, यह बहिष्कार आकस्मिक नहीं है - इसे व्यवस्थित रूप से उचित ठहराया जाता है। महिलाओं को भौतिक, घरेलू और जैविक से बंधी हुई के रूप में चित्रित किया जाता है, जबकि आध्यात्मिक मार्ग को इन क्षेत्रों से अलग होने के रूप में तैयार किया जाता है। नतीजतन, भले ही महिलाओं को ब्रह्मांडीय सिद्धांतों के रूप में बुलाया जाता है, लेकिन साथ ही उन्हें मूर्त रूप में आध्यात्मिक अधिकार के लिए अनुपयुक्त के रूप में तैयार किया जाता है। इस प्रकार स्त्री को दी गई प्रतीकात्मक शक्ति आकस्मिक है - यह तभी तक सार्थक है जब तक यह पुरुष व्याख्यात्मक और संस्थागत अधिकार का विरोध नहीं करती।

## निष्कर्ष

ऋग्वेद के आरण्यक साहित्य के अध्ययन से यह स्पष्ट होता है कि वैदिक युग में महिलाओं को समाज में सम्मानजनक स्थान प्राप्त था। आरण्यक ग्रंथों में स्त्री को केवल पारिवारिक जीवन तक सीमित नहीं रखा गया, बल्कि उसे धार्मिक, दार्शनिक तथा आध्यात्मिक गतिविधियों में भी महत्वपूर्ण भूमिका प्रदान की गई। महिलाओं को यज्ञीय कर्मों की सहभागी, नैतिक मूल्यों की संवाहक तथा ज्ञान की अधिकारी के

रूप में स्वीकार किया गया। इससे यह सिद्ध होता है कि वैदिक समाज में स्त्रियों की स्थिति अपेक्षाकृत सशक्त और सम्मानित थी। आरण्यक साहित्य में आध्यात्मिक चिंतन की प्रधानता होने के कारण स्त्री के आंतरिक गुणों, तप, संयम तथा ज्ञान को भी महत्व दिया गया है। यह साहित्य महिलाओं की बौद्धिक क्षमता और सामाजिक उपयोगिता को स्वीकार करता है। यद्यपि समय के साथ सामाजिक संरचनाओं में परिवर्तन हुआ और महिलाओं की स्वतंत्रता में कुछ कमी दिखाई दी, फिर भी आरण्यक ग्रंथों में उनके महत्व को नकारा नहीं गया। अतः ऋग्वेद का आरण्यक साहित्य भारतीय संस्कृति में महिलाओं की गरिमा, बौद्धिकता और आध्यात्मिक चेतना का महत्वपूर्ण प्रमाण प्रस्तुत करता है। यह अध्ययन न केवल वैदिक समाज की संरचना को समझने में सहायक है, बल्कि वर्तमान समाज को भी महिला सम्मान और समानता के मूल्यों की ओर प्रेरित करता है।

## संदर्भ ग्रंथ सूची


1. ब्राउन, सी.एम. (1990)। हिंदू दर्शन में स्त्रीत्व का प्रतीकवाद (पृष्ठ 33-56)। प्रिंसटन यूनिवर्सिटी प्रेस।
2. चक्रवर्ती, यू. (1998)। वैदिक ग्रंथों का लिंग निर्धारण: प्रतीकवाद और शक्ति (पृष्ठ 105-132)। सेज प्रकाशन।
3. चट्टोपाध्याय, डी.पी. (2005)। प्राचीन भारत की सांस्कृतिक पहचान (पृष्ठ 59-88)। मनोहर प्रकाशक।
4. कोबर्न, टी.बी. (1984)। देवी से मुठभेड़: देवी-महात्म्य का अनुवाद और इसकी व्याख्या का अध्ययन (पृष्ठ 70-95)। स्टेट यूनिवर्सिटी ऑफ़ न्यूयॉर्क प्रेस।
5. दलाल, आर. (2011)। हिंदू धर्म: एक वर्णमाला गाइड (पृष्ठ 135-160)। पेंगुइन बुक्स।
6. दांडेकर, आर.एन. (1966)। आरण्यक और वन विद्या (पृष्ठ 10-34)। मोतीलाल बनारसीदास।
7. डोनिगर, डब्ल्यू. (1990)। वैदिक परंपरा में महिलाएँ, अनुष्ठान और शक्ति (पृष्ठ 47-73)। ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस।
8. फ्रॉली, डी. (1994)। देवता, ऋषि और राजा: प्राचीन सभ्यता के वैदिक रहस्य (पृष्ठ 78-104)। मोतीलाल बनारसीदास।
9. गोंडा, जे. (1975)। वैदिक साहित्य: संहिताएँ और ब्राह्मण (पृष्ठ 181-210)। ओटो हैरासोविट्ज़।
10. गुप्ता, एस. (2000)। आरण्यकों में स्त्री प्रतीकवाद (पृष्ठ 39-67)। आर्यन बुक्स इंटरनेशनल।
11. हिल्टेबेइटेल, ए. (1988)। युद्ध की रस्म: महाभारत में कृष्ण (पृष्ठ 23-52)। सनी प्रेस।
12. जैमिसन, एस. डब्ल्यू. (1997)। बलिदानी पत्नी/बलिदानकर्ता की पत्नी: प्राचीन भारत में महिलाएँ, रस्में और आतिथ्य (पृष्ठ 50-79)। ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस।

**13.** केन, पी.वी. (1930). धर्मशास्त्र का इतिहास (खंड 3, पृ. 198-224)। भंडारकर ओरिएंटल रिसर्च इंस्टीट्यूट।

**14.** क्लोस्टरमायर, के.के. (2007)। हिंदू धर्म का सर्वेक्षण (तीसरा संस्करण, पृ. 121-150)। सनी प्रेस।

**15.** नाइप, डी.एम. (2015)। वैदिक आवाज़ें: एक जीवंत आंध्र परंपरा के अंतरंग आख्यान (पृ. 85-112)। ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस।

**16.** मैकडोनेल, ए.ए. (1917)। वैदिक पौराणिक कथाएँ (पृ. 133-160)। मोतीलाल बनारसीदास।

**17.** मैत्रा, आर. (2008)। वैदिक ब्रह्मांड विज्ञान में स्त्रीत्व (पृ. 22-48)। भारतीय ऐतिहासिक अनुसंधान परिषद।

**18.** मुलर, एफ.एम. (1879)। उपनिषद (पृष्ठ 99-124)। क्लेरेंडन प्रेस।

**19.** ओलिवेल, पी. (1996)। प्रारंभिक उपनिषद: व्याख्यात्मक पाठ और अनुवाद (पृष्ठ 40-65)। ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस।

**20.** पैटन, एल.एल. (1994)। देवताओं को ध्यान में लाना: प्रारंभिक भारतीय बलिदान में मंत्र और अनुष्ठान (पृष्ठ 110-138)। कैलिफोर्निया विश्वविद्यालय प्रेस।

**Author's Declaration:**

I/We, as an author/authors of the above paper/article, hereby declare that the content of this paper is prepared by me/us for publication in this journal is completely my/our own genuine paper and if any person having copyright issue or patent or anything related to the content, I/we shall always be legally responsible for any issue. If any data or information given by me/us is not correct, I/we shall always be legally responsible. With my/our whole responsibility legally and formally have intimated the publisher that the paper has been checked by guide or expert or supervisor to make it sure that paper is technically right and there is no unaccepted plagiarism. If any issue arises related to plagiarism or any issues, I/we will be solely/entirely responsible for any legal disputes or legal issues. I/we declared that if publisher finds any complication or error or anything hidden or implemented otherwise, my/our paper may be removed from the website. I/we also aware that the publication fees is not refunded further in any circumstances. Even if anything is found illegal publisher may also take legal action against me/us. I/we also declared that this journal/publisher will not be

**Dr. Suryanarayan Gautam**

**Sonamoni Das**